प्रवचन

परमहंसश्रीहंसानंदजीसरस्वतीदण्डीस्वामीजी

विषय तालिका

CD # 45 * JUN 2011 *

SN	Title	Min	Coding	Contents	
1	01.mp3	29	माण्डूक्य उपनिषद :: २ ३ ४ चरण	**द्वितीय पाद** इसका स्वप्न स्थान है अन्तःकरण के अंदर ही सारा संसार दिखाई देता है इसके ७ अंग, १६ मुख व सूक्ष्म भोग हैं इसका तैजस नाम है **तृतीय पाद** यहाँ सोया हुआ पुरुष न स्वप्न ही देखता है न कामना ही करता है, सषुप्ति उसका स्थान है यहाँ जा०-स्व०का संसार एकरूप घोर अंधकार सुषु०रूप हो गया है, ज्ञान भी अलग-२ न होकर एकीभूत हो गया है इस अवस्था में आनंद की प्रचुरता है व चेतन द्वारा ही उसका भोग होता है इसरे चरण में हमारा नाम प्राज्ञ है यही सबका ईश्वर है, जागृत स्वप्न का संसार इसी से उत्पन्न होता है व पुनः उसी में लीन हो जाता है **चतुर्थ पाद** तुरीय-परमार्थ स्वरूप :: इसमें ३ अवस्थाओं और उनके स्वामी का निषेध कर दिया है । उसका स्वरूप अगोचर अव्यवहार्य अचिन्त्य अलक्षण एकात्म यानि वह स्वयं अपने ज्ञान में ही प्रमाण है क्यों कि वह जा०स्व०सु०, इनके स्वामी विश्व तैजस प्राज्ञ एवं बुद्धि मन इन्द्रिय सबको जानने वाला ४था है ये निष्प्रपंच है अतः शांत और परम कल्याण ही उका स्वरूप है वही ४था ही हमारा तुम्हारा आत्मा है जीव को अपने ४थे स्वरूप को जानना ही अभीष्ट है	भाग २
2	02.mp3	28		**गीता : १३/१-६ :: क्षेत्र-क्षेत्रज्ञ २ पदार्थ हैं।** सभी शरीर क्षेत्र हैं व इन्हें ज्ञान नहीं होता। ज्ञानवान क्षेत्रज्ञ है जो सभी शरीरों के भीतर रहता है व सबकी आखों से देखता है। अर्जुन सभी शरीरों में क्षेत्रज्ञ तू मुझे ही जान। विकारी प्रकृति **'क्षेत्र'** और पुरुष **'क्षेत्रज्ञ'** को तत्त्व से जानना ही ज्ञान है **क्षेत्र** = पंचभूत + समष्टि-अहंकार + समष्टि-बुद्धि एवं चिदाभास (ब्रह्मा) + अव्यक्त/मूल प्रकृति + मन + १० इन्द्रियाँ और इनके विषय अथवा **अ०७ के अनुसार** अष्टधा अपरा प्रकृति (स०बुद्धि+स०मन+स०अहंकार या मूलप्रकृति+पंचभूत) + जीवरूप परा चेतन प्रकृति = **दृश्य** = **क्षेत्र** :: इन्हीं दोनों परा और अपरा से जगत की उत्पत्ति पालन संहार का काम होता है, इन दोनों से भिन्न व इनका आधार-अधिष्ठान मैं साक्षी चेतन निनि० परम परमात्मा हूँ यही मुझ ईश्वर और जीव का सच्चा स्वरूप है। दृश्य माया है व द्रष्टा ब्रह्म है यानि जा०-स्व०-सु०/प्रकृति/माया दृश्य है और इनको देखने वाला मैं सच्चिदानंद ब्रह्म हूँ, अर्जुन वही तेरा स्वरूप है।	*** Imp ***
3	03.mp3	30	माण्डूक्य उपनिषद	ओंकार की ४ मात्राओं का आत्मा के ४ चरणों से तुलना / एकत्व एवं महिमा ::: इन ४ मात्राओं की आत्मा के विश्व तैजस प्राज्ञ और तुरीय/कूटस्थ/ब्रह्म से एकता बतलायी है For details see Q & N-II / 20 - 21 :: CD # 43 : 12.+ 13 + 14 mp3	भाग ३
4	04.mp3	35		गीता : १५/१६-२० :: **क्षर-अक्षर २ पुरुष हैं**, क्षण-क्षण में नाश होने वाले को क्षर एवं कूटस्थ को अक्षर कहते हैं। उत्पत्ति-नाश रहित सदा एक सा रहने वाला हमारा तुम्हारा आत्मा कूटस्थ या अक्षर है। कूटस्थ आत्मा काल का भी द्रष्टा-साक्षी है उसकी ज्ञान दृष्टि का कभी लोप नहीं होता। **कपट रूप से स्थित रहने वाली, जा०स्व० की अपेक्षा से प्रकृति या सुषुप्ति को भी 'कूटस्थ / अक्षर' कहते हैं** । कारण-उपाधि से हमारा प्रतिबिम्ब ही ईश्वर (प्राज्ञ) और कार्य-उपाधि से जीव (विश्व/तैजस) कहलाता है। जो क्षर-अक्षर से परे सदा प्रकाशमान रहने वाला एवं क्षर-अक्षर (प्रकृति) को प्रकाशित करता है उसे उत्तम पुरुष कहते हैं। जो अपने को ऐसा पुरुषोत्तम स्वरूप जानता है उसे कुछ करना-पाना शेष नहीं है, वह तो नित्य मुक्त है।	*** Imp ***
5	05.mp3	37		आत्मा-परमात्मा का अभेद ज्ञान ही यथार्थ है। देह आदि दृश्य अनात्मा है बालवत् अज्ञानी भी छाया को सत्य मान लेते हैं। ये देह भी छायारूप असत जड़ नाशवान हैं व हम इनके द्रष्टा हैं हमारा स्वरूप नित्य अविनाशी पुरुष/चेतन आत्मा है। ये संसार पुरुष की छाया के समान माया से बना है। हमारा आत्मा सत्घन-चित्घन-आनंदघन दर्पण तुल्य है और संसार उसमें छायारूप भास रहा है। आत्मा द्रष्टा है व अनात्मा दृश्यमान संसार झूठा है। **'ब्रह्म सत्यं जगत मिथ्या जीवौ ब्रह्मैव न परा'**	
6	06.mp3	28	गोपालोत्तर ताप्नीय उपनिषद	मा०उ०में ओंकार के ४ चरण 'विश्व तैजस प्राज्ञ व अमात्र' की भाँति गोपालोत्तर ताप्नीय उ०में भी ओकार के चार चरण एवं मात्राओं का निरूपण किया गया है १ **अकार**-बलराम-विश्व-जा०का स्वामी २ **उकार**-प्रद्युम्न-तैजस-स्व०का स्वामी ३ **मकार**-अनिरूद्ध-प्राज्ञ-सु०का स्वामी ४ **अमात्र**-हमारा आत्म स्वरूप जगत का आ०अधि० द्रष्टा-साक्षी सच्चि०भगवान श्रीकृष्ण। **मूलप्रकृति**-रुक्मणि जगत जननी, ग्वाल बाल व गउऐं-**श्रुतियाँ** व कृष्ण का व्यापक रूप ही **वृज** है। राधिका को कृष्ण की आत्मा ही बताया है	
7	07.mp3	40		भ०राम और सीता जगत के माता पिता हैं इन्हें ही प्रकृति-पुरुष / माया-ब्रह्म कहते हैं। सीताजी जगत की उत्पत्ति पालन संहार करती हैं और राम इन्हें सत्ता-स्फूर्ति देते हैं। राम सच्चिदानंद ब्रह्म हैं व सीताजी महामाया शक्ति हैं। **आनंद रामायण :: मनोहर काण्ड :: श्री राम जय राम जय जय राम** की **व्याख्या** और **महिमा** - नित्य प्रातः इस महामंत्र का २१ बार जप करने से अनेक जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। जीवात्मा के रूप में सर्वत्र राम ही रम रहे हैं और योगी लोग राम में रम रहे हैं। आत्मा और परमात्मा का कभी वियोग नहीं होता, इसे **'नित्ययोग'** कहते हैं। <Noisy recording>	** ** **
8	08.mp3	29	राम नाम की महिमा	भगवान राम जगत के आधार-अधिष्ठान हैं व जगत भगवान राम में अध्यस्थ है, जगत की उत्पत्ति-पालन-संहार सीताजी करती हैं **श्री राम जय राम जय जय राम** १ **र**कार = **अग्नि** = मन के शुभ-अशुभ कर्म / पुण्य-पाप मल को भस्म करने वाला, **अ**कार = **सूर्य** = अनादि अज्ञान अविद्या रूपी अंधकार नाशक एवं **म**कार = **चन्द्रमा** = जीव के तीनों तापों का नाशक २ राम नाम सभी अक्षरों में श्रेष्ठ है क्योंकि राम पद में र के आगे शब्द न होने पर **र**कार छत्र के समान ऊपर चला जाता है और मकार मुकुटमणि रूपी चन्दबिन्दु बन जाता है ३ राम नाम अवांतर और महावाक्य दोनों है, **अवांतर वाक्य** = राम का स्वरूप *'सत्यं ज्ञानं अनंतं ब्रह्म'* हैं, **महावाक्य** *'तत्वमसि'*:-**र** = *तत्* = *ब्रह्म*, **अ** = *त्वम्* = *जीव*, **म** = *असि* = *दोनों का एकत्ववाचक*	Imp
9	09.mp3	34		**गीता २/१६ :** अर्जुन, **सत् और असत् २ पदार्थ हैं**, जो सदा रहे उसे **सत्** और जो कभी न हो उसे **असत्** कहते हैं। इन्हें ही द्रष्टा-दृश्य, ब्रह्म-माया, पुरुष-प्रकृति भी कहते हैं। इनका परस्पर विलक्षण स्वभाव है। ब्रह्म सत्-चित्-आनंदरूप है तो माया असत्-जड़-दुःखरूप है। द्रष्टा साक्षी चेतन का कभी अभाव नहीं होता। हमारी आत्मा का स्वरूप साक्षी चेतन सच्चिदानंद है उसकी २४ घंटे यानि जा०स्व०सु०में कभी मृत्यु नहीं होती वह सदा एक समान रहता है व जा०स्व०सु०/माया का कभी भाव नहीं है।	१
10	10.mp3	30		**अन्नपूर्णोपनिषद :: इस संसार में ५ अंश हैं -'अस्ति भाति प्रिय नाम रूप',** आगे के तीन ब्रह्म का स्वरूप है और 'नाम रूप' जगत का स्वरूप है। 'अस्ति भाति प्रिय' सत्-चित्-आनंद का ही पर्यायवाची है। नाम से ही रूप जाने जाते हैं। भगवान का भी निर्गुण एवं सगुण रूप भी नाम से ही जाना जाता है। संसार का व्यवहार नाम से ही चलता है।	
11	11.mp3	41		**गीता २/१६ :** अर्जुन, **सत् और असत् २ ही पदार्थ हैं संसार में**, हमारे तुम्हारे **देह** असत् हैं व देहों के भीतर **देखने वाला** सत् है। ये देह सदा नहीं नहीं रहते-जा० के देह स्व० में और स्व०के देह सु० में नहीं रहते किन्तु हम इन देहों को देखने वाले सदा एक रस रहते हैं। ये देही आत्मा पुराने शरीर रूपी वस्त्रों को बदल कर नये शरीर धारण करता रहता है। हमारी आत्मा पुरुष व देह छाया के समान है ये शरीर एक क्षण में ही मेरी माया से बन जाते हैं। नट-नटनी द्वारा राजा के दरबार में **माया का दृष्टांत**	२

12	12.mp3	34	⊕	⊕		**भ०राम और सीता जगत के माता पिता हैं** इनका स्वरूप वेदों में माया और ब्रह्म बताया है, इन्हें ही प्रकृति-पुरुष कहते हैं। जगत की उत्पत्ति पालन संहार सीताजी करती हैं, भ०राम सच्चिदानंद पूर्ण पुरुष हैं उनमें कर्म नहीं हैं। राम का स्वरूप चेतन द्रष्टा साक्षी हैं। जीव का स्वरूप भी ब्रह्म ही है किन्तु अज्ञानवश वह देह में अभिमान कर बैठा है।	
13	13.mp3	35	⊕	⊕		**गीता २/१६-१८ :** अर्जुन, **संसार में सत् और असत् २ ही पदार्थ हैं**, जो सत् है वह चित् और आनंद भी है वह सच्चिदानंद रूप ही हमारा आत्मा या परमात्मा है और सारा दृश्य जगत असत् है। जागृत स्वप्न में नहीं रहता और स्वप्न जागृत में नहीं रहता परन्तु हमारा कभी अभाव नहीं होता क्योंकि हमारा स्वरूप द्रष्टा साक्षी सच्चिदानंद है। आत्मा ही ब्रह्म है और ब्रह्म ही हमारा आत्मा है जो सर्वव्याप्त है। आत्मा अविनाशी है पर प्रकृतिजन्य देह जन्मने-मरने वाले हैं। आत्मा नित्य और अप्रमेय है।	३
14	14.mp3	31	⊕	⊕	⊕	प्रवचन अनुपलब्ध	NA
15	15.mp3	37	⊕	⊕		**गीता २/३०+१७-२४ :** देह-देही २ वस्तुऐं हैं, दिखाई पड़ने वाले **'देह'** और देखने वाले को **'देही'** कहते हैं, वह स्वभाव से ही नित्य अवध्य है। शरीरों का ही उत्पत्ति-नाश होता है देही का नहीं। देही व्यापक, द्रष्टा साक्षी है। देह जड़ व देही चेतन है। सभी कर्म प्रकृति राज्य में हैं, देही तो अकर्म द्रष्टा साक्षी रहता है वह न किसी को मारता या मरता है। देह अनात्मा है और देही आत्मा ही हमारा तुम्हारा स्वरूप है। आत्मा अछेद्य अदाह्य अक्लेद्य एवं अशोष्य है, वह नित्य सर्वगत स्थाणु अचल व सनातन है।	४
16	16.mp3	30	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/७-११** जीव मेरा ही अंश है एवं पुरातन और सनातन है क्योंकि ये अजन्मा है। जीव अपने सनातन स्वरूप को भूल जाने के कारण देह इ०म०बु० में अभिमान कर लेता है व कर्ता-भोक्ता बनकर जन्म-मरण के चक्र में फँस जाता है। प्रकृति में स्थित मन बुद्धि चित्त अहंकार व ५ ज्ञान और ५ कर्मेन्द्रियों के सूक्ष्म देह में मुझ चेतन का आभास पड़ता है जिससे देह इ० म० बु० प्राण अपना-२ कार्य करने लगते हैं। ब्रह्म ही विद्या/कारण उपाधि से ईश्वर व अविद्या/कार्य उपाधि से जीव कहलाता है।	*** 1 Imp
17	17.mp3	33	⊕			सच्चिदानंद ब्रह्म को जानने के लिये 'साधन सम्पन्न' होकर श्रोत्रीय-ब्रह्मनिष्ठ गुरु की शरण में ही जाना चाहिये । तब गुरु शिष्य को त्रिकांडमय वेद का उपदेश करते हैं। **कर्मकाण्ड** का स्वरूप निरूपण, **सामान्य एवं विशेष कर्म**, विहित कर्म ही धर्म है।	
18	18.mp3	37	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१२-१४** १२सूर्य चन्द्रमा अग्नि में जो तेज है वह उनका नहीं है वह मेरे आभास रूप तेज से तेजमान हो रहे हैं १३ इस पृथ्वी में प्रविष्ट होकर मैं पृथ्वी को धारण करता हूँ, इसकी कठिनता बनाए रख कर इसे बाँध कर रखता हूँ, चन्द्रमा में प्रविष्ट होकर उसे रस प्रदान करता हूँ तथा सभी औषधियों को पुष्ट करता हूँ १४ मैं वैश्वानर नाम की अग्नि होकर, प्राण अपान से युक्त होकर, जठराग्नि को तीव्र करके ४ प्रकार के अन्न **'भक्ष्य भोज्य चोस्य लेह्य** या **पेय'** को मैं पचाकर उनका रस बनाता हूँ एवं स्थूल भाग को विसर्जित करके सार भाग से रस रक्त माँस मेदा अस्थि मज्जा वीर्य बनाता हूँ। विशेष रूप से उत्पन्न को **विभूति** कहते हैं, सूर्य चन्द्र अग्नि आदि विभूतियाँ हैं। कृष्णयजुर्वेदीय का शारीरिकोपनिषद / गर्भोपनिषद विस्तार से।	*** 2 Imp
19	19.mp3	26	⊕	⊕		**'मल विक्षेप आवरण'** ३ दोष ही भगवान के ज्ञान में व्यवधान हैं जिनके निवारण हेतु ही **'कर्म उपासना ज्ञान'** त्रिकाण्डमय वेद है। मायारूपी मेघ 'जा०स्व०सु०' भगवान को ढक लेते हैं व दर्शन नहीं होने देते हैं। सुषुप्ति बादल व जा०स्व०वर्षा के समान हैं। वेद के ३ कांड इस मायारूपी मेघ की निवृत्ति के साधन हैं। जीव को भ०तो नित्य ही प्राप्त हैं किन्तु वह माया से आवृत होने से उनके दर्शन नहीं कर पाता। अनेक जन्मों के पाप नाश हेतु निष्काम कर्म, चित्त एकाग्रता हेतु उपासना और आवरण हटाने के लिये ज्ञानकाण्ड है। **कर्म का स्वरूप** - निष्कार्म + वर्णाश्रमानुसार कर्म, **४ प्रकार के भक्त** - १अर्थार्थी २आर्त ३जिज्ञासु ४ज्ञानी	
20	20.mp3	43	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१५** १५ मैं स्वभाव से ही सच्चिदानंद हूँ व मैं सच्चि०ही अन्तर्यामी जीवात्मा के रूप में सबके हृदय में विराजमान हूँ। मुझ सुख सिन्धु में ये शरीर मायारूपी तरंगें हैं, तरंगें सत्य नहीं होती जल ही सत्य होता है। तरंगों की भाँतिं ये देह - ब्रह्माण्ड आदि उत्पन्न और नाश होते रहते हैं अतः झूठे हैं। जीवात्मा मैं ईश्वर हूँ, मुझ द्रष्टा साक्षी ईश्वर/सच्चि० में कर्म नहीं हैं, सभी कर्म माया राज्य में हैं। मुझसे ही स्मृति ज्ञान और अपोहन होता है व सब वेदों से मैं ही जानने योग्य हूँ तथा वेदांत का कर्ता और वेदों को जानने वाला मैं ही हूँ। अर्जुन तुम स्वयं को मेरा ही रूप जानो, ये शरीर माया मात्र हैं। मैं ही शरीर के भीतर आत्मा व शरीर के बाहर परिपूर्ण अखंड परमात्मा हूँ। अर्जुन तुम स्वयं को देह इन्द्रिय मन बुद्धि प्राण मत मानो, आत्मा जानो।	*** 3 Imp
21	21.mp3	28	⊕			भगवान को जानने का एक मात्र साधन त्रिकाण्डमय वेद है। भगवान राम ने त्रि०वेद की वाणी को करके दिखाने के लिये मनुष्य अवतार लिया। भगवान स्वयं ही ब्रह्मा बनकर सृजन करते हैं विष्णु बनकर पालन और महेश बनकर संहार करते हैं। ये सृष्टि भगवान की लीला मात्र है। **कर्मकाण्ड** की शिक्षा हेतु पुत्र सखा भाई शिष्य सबके धर्म प्रभु करके दिखलाते हैं।	
22	22.mp3	45	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१५** १५ मैं सबके हृदय में विराजमान हूँ और सबका प्रेरक भी मैं ही हूँ जैसे विद्युत मशीनों की प्रेरक होती है। मैं विद्युत के समान जड़ दे०इ०म०बु०प्रा० में व्यापक हूँ। सबकी आखों से मैं एक ही देखता हूँ पर मैं दिखाई नहीं देता। जीव मेरा ही स्वरूप है किन्तु वह अपने स्वरूप को भूला हुआ है। मेरे द्वारा ही उसे अपने स्वरूप की स्मृति आ जाती है ज्ञान हो जाता है तथा विपरीत भावना व संशय का नाश हो जाता है। सब वेदों से मैं ही जानने योग्य हूँ तथा मुझे बताने के लिये ही वेद प्रकट हुए हैं। वेद को जानने वाला भी मैं ही हूँ। लक्ष्मण शक्ति, कालनेमि वध, संजीवनी बूटी प्रसंग। **भ०गीता ही वास्तविक अमृत है**	4
23	23.mp3	43	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१५** १५ मैं ही सब जीवों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित हूँ, मुझ साक्षी चेतन द्रष्टा की दृष्टि का कभी नाश नहीं होता। मुझ आत्मा रूपी दर्पण में जो द्रष्टा भी है, यह जगत छाया चित्र की भाँति भासता है। अतः स्वयं को साक्षी चेतन द्रष्टा जानो। मेरी प्रेरणा से ही दे०इ०म०बु० अपना-२ कार्य करतीं हैं। वेदों से मैं ही वेद्य हूँ। मेरी कृपा से ही मेरी स्मृति और ज्ञान होता है एवं **'संशय-विपर्यय'** का अपोहन/नाश भी मुझसे ही होता है। संशय = वेदांत का विषय क्या है? वेदांत जीव-ब्रह्म का एकत्व बताता है। २ प्रकार के संशय हैं, **प्रमाणगत** - जीव-ब्रह्म के एकत्व का प्रमाण वेदांत शास्त्र है, **प्रमेयगत** - जीव-ब्रह्म का भेद सत्य नहीं है दोनों अभेद हैं-यह मनन से दूर होता है। विपर्यय ज्ञान = देह में आत्मभाव+संसार में सत् एवं सुख बुद्धि विपरीत ज्ञान है	5 Very Imp
24	24.mp3	26	⊕	⊕		भगवान को प्राप्त करने का साधन भगवान की वाणी वेद है। वेद त्रिकाण्डमय है - 'कर्म उपासना ज्ञान', **कर्मकाण्ड** :: कर्म दो प्रकार के हैं १ **सकाम कर्म** से संसार मिलता है २ **निष्काम कर्म** से भगवान मिलते है। वेद विहित कर्म ही धर्म हैं :-१ विशेष कर्म - वर्णाश्रम पदाधिकार के अनुसार २ सामान्य कर्म - अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य	1
25	25.mp3	45	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१५-१७** १५ मैं ही सबके हृदय में अन्तर्यामी रूप से विराजमान हूँ, सब देहरूपी मन्दिर मेरी माया से क्षण मात्र में बन जाते हैं, अकेला उनमें बैठकर देखने वाला देव मैं ही हूँ। मेरे द्वारा ही परमात्मा की स्मृति और ज्ञान होता है एवं संशय-विपर्यय मिट जाता है। सभी दृश्य माया है और द्रष्टा मैं सच्चि०आत्मदेव ही हूँ। संपूर्ण वेदों से मैं ही वेद्य हूँ जो मुझे बताने के लिये ही मुझसे प्रकट हुए हैं। मैं ही श्रोता हूँ और मैं ही वक्ता हूँ १६ इस लोक में क्षर और अक्षर २ पुरुष हैं। क्षण-क्षण में क्षीर्ण होने वाले सभी भूत प्राणी क्षर हैं ये कार्यमाया है, सुषुप्ति/कारणमाया से जा०-स्व० का संसार उत्पन्न होता है। २४ घंटे में जा०स्व० सु० तीनों बदल जाते हैं। कार्य की अपेक्षा से कारणमाया को अक्षर कहते हैं इसका नाश परमात्मा के ज्ञान से ही होता है फिर सत्य ब्रह्म ही शेष जायेगा। कारण कार्य की अपेक्षा कृत सत्य होता है। हमारा तुम्हारा स्वरूप द्रष्टा साक्षी चेतन है, हम जा०स्व० सु० तीनों को देखते हैं। हम अचल सनातन द्रष्टा हैं व दृश्य माया है। इस माया को कूटस्थ भी कहते हैं जो कपट रूप से ब्रह्म को ढाँक कर असत जड़ झूठे संसार को दिखाती है। १७ कार्य-कारण माया से जो उत्तम पुरुष है उसको परमात्मा कहते हैं वह सबका अपना स्वरूप कार्य-कारण माया/जा०स्व०सु० से परे उनके ऊपर उनका द्रष्टा साक्षी है जो सदैव प्रकाशमान रहता है। उत्तम पुरुष सत्य-ज्ञान-आनंद से पूर्ण होने से पुरुषोत्तम है। ये जा०स्व० सु० की सीमा है उनका आधार-अधिष्ठान है जिस पर माया का खेल हो रहा है। तीनों लोकों में मैं प्रविष्ट हूँ और मैं ही इन्हें धारण करता हूँ।	*** 6 Imp
26	26.mp3	30	⊕	⊕		भगवान ही अमृतरूप हैं भगवान को जानने वाला भी भगवत् रूप हो जाता है। ब्रह्म का स्वरूप सच्चिदानंद है, हे जीव ! **'तत्त्व मसि'** - वही ब्रह्म तू है। है। वेद त्रिकाण्डमय है - 'कर्म उपासना ज्ञान', **कर्मकाण्ड** :: वेद विहित कर्म ही धर्म हैं :-१ विशेष कर्म - वर्ण आश्रम पदाधिकार के अनुसार २ सामान्य कर्म - अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य	2
27	27.mp3	31	⊕	⊕	⊕	**गीता १५/१७-२०** १७ कार्य-कारण माया से जो उत्तम पुरुष है, जो जा०स्व०सु० इनों लोकों में व्यापक होकर उन्हें धारण करता है उसको परमात्मा कहते हैं वह सबका अपना स्वरूप कार्य-कारण माया/जा०स्व०सु० से परे, उनके ऊपर, उनका द्रष्टा साक्षी है जो सदैव प्रकाशमान रहता है। उत्तम पुरुष सत्य-ज्ञान-आनंद से पूर्ण होने से पुरुषोत्तम है। ये जा०स्व० सु० की सीमा है उनका आधार-अधिष्ठान है जिस पर माया का खेल हो रहा है। १८ क्योंकि मैं क्षर/जगत/कार्यमाया व अक्षर/सु०/कारणमाया से भी अतीत/परे हूँ इसलिये लोक और परलोक में मुझे पुरुषोत्तम कहते हैं १९ इस प्रकार से जो मुझे पुरुषोत्तम रूप से जानता है वह	*** 7

						सवज्ञ है, वह सब प्रकार से मेरा ही भजन करता है २८ हे निष्पाप अर्जुन ! मेरे द्वारा तुझे यह सर्वश्रेष्ठ गोपनीय रहस्य युक्त शास्त्र सुनाया गया, इसको तत्त्व से जानने वाले को जानने के लिये अब कुछ शेष नहीं । अब वह कृत्-कृत्य हुआ, उसे कुछ जानना, करना, पाना शेष नहीं, वह पूर्ण ज्ञानी है।	Imp
28	28.mp3	30				कर्मकाण्ड :: वेद विहित कर्म ही धर्म हैं :-१ विशेष कर्म - वर्ण आश्रम पदाधिकार के अनुसार २ सामान्य कर्म - अहिंसा सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अक्रोध, गुरु शुश्रुषा, शौचं	3
29	29.mp3	31				भगवान के ज्ञान का साधन त्रिकाण्मय 'कर्म उपासना ज्ञान' वेद है। अपने धर्म के अनुसार कर्तव्य पालन कर्मयोग कहलाता है। सकाम कर्म से संसार व निष्काम कर्म से भगवान मिलते हैं। ईश्वर सब भूत प्राणियों के हृदय में ही विराजमान है किन्तु भगवान के सम्यक दर्शन के लिये 'मल-विक्षेप-आवरण' रहित शुद्ध अन्तःकरण होना अनिवार्य है। कृष्णयजुर्वेदीय - शारीरिकोप निषद :: कर्मयोग :: वेद विहित कर्म ही धर्म हैं :-१ विशेष कर्म - वर्ण आश्रम पदाधिकार के अनुसार २ सामान्य कर्म - अहिंसा सत्य	4